संत कबीर और संत तुकाराम के काव्य में जीवनमूल्य

डॉ. कमलकिशोर एस. गुप्ता

सह प्राध्यापक एवम् शोध निदेशक

दादा रामचंद बाखरू सिंधु महाविद्यालय, नागपुर

हिन्दी साहित्य में भक्तिकाल का अपना विशिष्ट स्थान है। भक्तिकालीन संत साहित्य अपने युग का अद्वितीय चेतनामय साहित्य रहा है। भारत की पावन भूमि पर अनेक महान विभूतियों ने जन्म लेकर भारत की संस्कृति को संपोषित करने का कार्य किया।

भारतीय जीवन मूल्य : भारत के जीवन मूल्य मूलतः उनकी संस्कृति व धर्म में है। भक्तिकाल के संत कवियों ने समन्वयवादी दृष्टिकोण अपनाते हुए मानव कल्याण के लिए साहित्य सृजन किया वास्तव में साहित्य की शब्दनिष्ठा अधिक स्थाई होती है। साहित्य जीवन के यथार्थ को तो प्रस्तुत करता है साथ की राष्ट्र एवं जीवन मूल्यों की अभिव्यक्ति द्वारा उसके भविष्य की ओर इंगित करता है।

भारतीय जीवन मूल्यों में विश्वबंधुता की भावना के अनुरूप सभी प्राणियों के मंगल की कामना की जाती है। जहाँ प्रेम है, सद्भाव है, सेवा है, समता है, बलिदान व त्याग है, सत्य व करूणा है, संयम है। जहाँ पर पीड़ा को पीड़ा समझने की भावना उसके अपने भीतर उपजी है। यह जीवन मूल्य विश्व के सर्वश्रेष्ठ जीवन मूल्य है।

भारत के साहित्यिक पुनरुत्थान को दिशा देने में मध्याकालीन संत कवियों का महत्वपूर्ण योगदान है। भक्तिकालीन संत कबीर, नानक, रैदास, तुलसी, नामदेव, तुकाराम, दादू दयाल आदि संतों ने अपनी वाणी से साहित्य का निर्माण किया। यह साहित्य जीवन मूल्यों पर आधारित है। संत साहित्य में सामाजिक बुराईयाँ कुरीतियाँ, आडंबर, जाति भेद, छूआछूत, मोहमाया, विषयवासना की कटु आलोचना की गई है। उन्होंने अहिंसा, परोपकार, मानव सेवा, करूणा, नैतिकता, संयम, विश्वास जैसे मानवीय मूल्यों को प्रतिपादित किया है।

वर्तमान काल में भौतिक सुख सुविधा के कारण व्यक्ति स्वार्थी संकुचित मनोवृत्ति का हो गया। आज मानवीय मूल्यों में गिरावट आ गई है। वह पतन की ओर बढ़ रहा है। ऐसे समय हमारे संतो द्वारा प्रतिपादित मानवीय मूल्यों व उनके रचित साहित्य की वर्तमान में अत्यधिक जरुरत है। मैं यहाँ पर संत कबीर और संत तुकाराम के काव्य में आये जीवन मूल्यों को कुछ बिंदुओं के माध्यम से तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत कर रहा हूँ।

वर्ण व्यवस्था : संत कबीर ने तत्कालीन वर्ण व्यवस्था और वर्णाश्रम का कड़ा विरोध किया। उन्हें जन्म के आधार पर ब्राह्मण जाति की श्रेष्ठता स्वीकार नही थी वे ब्राह्मण को ललकारते हुए कहते है –

जो तू ब्राह्मण, ब्राह्ममणी जाया,

आन बाट काहे नहीं आया।

संत तुकाराम महाराज ने वर्ण व्यवस्था की कड़े शब्दों में निंदा की है। वे मनुष्य का वर्ण जन्म के आधार पर न मानकर कम तथा गुणों के आधार पर मानने के पक्ष में थे वे कहते है –

काय खंडिती भूमिका। वर्णा पायरिका लोका। २

जाति व्यवस्था : संत कबीर मनुष्य का मूल्यांकन जाति के आधार पर न कर कम के आधार पर करने के पक्ष में थे। भारतीय समाज में आज भी जाति भेद मिटा नही स्वर्ण जाति के लोग अपने को श्रेष्ठ समझते है और वह निम्न जाति का शोषण व अत्याचार करते है जिसके कारण उनके कुल का नाम बदनाम होता है। इस संबंध में कबीरदास जी कहते है –

ऊँचे कुल का जनमिया, करनी ऊच न होय।

सुवरन कलश सुरा भरा, साधु निंद होय।। ३

मनुष्य की श्रेष्ठता जाति के आधार पर तय करना समाज की प्रमुख विशेषता बन गई थी। तुकाराम महाराज भक्ति साधना में जाति को महत्वपूर्ण न मानकर गुण को ही अधिक महत्वपूर्ण मानते है। उनका मानना है कि ब्राह्मण को समाज में श्रेष्ठ दर्जा प्राप्त है लेकिन उनके कम सही नही है वह सच्चा ब्राह्मण नही –

यथा – वेश वंद्या पुरते। कोण ब्राह्मण निरूते। ४

कथनी – करनी में अंतर : मनुष्य कहता कुछ और है और करता कुछ है, यही प्रवृत्ति उसके पतन का कारण है और जब तक मनुष्य की वाणी और कार्य में समन्वय नही हो जाता, तब तक वह ब्रह्मा का साक्षात्कार नही कर सकता।

कबीर दास जी कहते है कि ब्रह्मा को प्राप्त करना हो तो मनुष्य को वाणी और कम में समन्वय स्थापित करना चाहिए अर्थात जो कुछ भी वह उपदेश देता है। स्वयं उन पर आचरण न करे तो उसका उपदेश देना व्यर्थ है। इस संबंध में कबीर कहते है कि –

''जैसी मुख तै नीकसै, तैसी चाले नाहि।''

मानिष नहीं ते स्वान गति, बांध्या जमपुर जाँहि। ६

तुकाराम का कहना था कि मनुष्य जो कहता है उन बातों को स्वयं उसने आचरण में, व्यवहार में लाना चाहिए। समाज में बहुत से लोग बहुत ज्ञान भरी बाते कहते है परोपकार की बाते करते है लेकिन उसे व्यवहार में नही अपनाते। इस संबंध में तुकाराम जी कहते है –

बोल बोलता वाटे सोपे। करणी करिता टीर कापे।

कथनी पठनी करूनि काय,

वाचुनि रहणी वाया जाय। १०

नारी के प्रति दृष्टिकोण – संत कबीर ने बड़े ही स्पष्ट शब्दों में नारी के कनक और कामिनी रुप की निंदा की है। कबीर दास जी ने नारी के कनक और कामिनी के रुपों को विष के समान माना है इनके दर्शन मात्र से विष चढ़ जाता है जो मनुष्य उनका उपभोग करता है वह विनाश को प्राप्त होता है – इस संबंध में वे कहते है –

एक कनक अरु कामिनी, विष फल कीएउ पाई।

देखै ही थे विष चढ़ै, खाँये सूँ मरि जाइ।। ५

संत कबीर के समान ही तुकाराम ने भी नारी के वेश्या रुप की कड़ी निंदा की है उनका मानना है कि वेश्या की प्रीति क्षणिक एवं स्वार्थ प्रेरित होती है। वे कहते है वेश्या कितनी भी सुंदर व आकषण क्यों न हो वह पतिव्रता नारी के सामने तुच्छ है इस संबंध में तुकाराम जी लिखते है –

साधूच्या दर्शना लाजशी गव्हारा।

वेश्येचिया घरा पुष्पे नेसी।।

वेश्या दासी भुरळी जगाची वोवळी।

ते तूज सोवली वाटे कैसी? ६

अंध विश्वास : संत कबीर ने श्राद्ध व पिंडदान के संबंध में समाज में व्याप्त अंध विश्वास व रुढिगत परंपरा पर व्यंग्य करते हुए कहते है कि मनुष्य माता–पिता के जीवित रहते हुए पुत्र को उन पर दया नही आती परंतु मृत्यु के पश्चात मनुष्य पितृण से मुक्ति के लिए, मृतक की आत्मा की शांति व मोक्ष प्राप्ति के लिए श्राद्ध विधि व पिंडदान करता है। यह सब व्यर्थ है इस संबंध में कबीर कहते है –

जीवित पित्रहि माराहि डंडा, मूंवा पित्र ले घाले गंगा।

जीवित पित्र कूँ अन न खावै, मुंवा पाछै प्यंड □खावै।। ७

श्राद्ध व पिंडदान के संबंध में तुकाराम जी कहते है जीते जी माँ–बाप को खाने को नही देते लेकिन मरने के बाद उनकी आत्मा की शांति व मोक्ष के लिए विविध प्रकार की क्रिया, श्राद्ध कम व पिंडदान करते है तुकाराम जी कहते है –

''वंचुनिया पिंड। भाता दान करीतंड

मेला राखे दिस। ज्या लेपन जाले वोस।'' ८

मूर्तिपूजा का विरोध : कबीरदासजी मूर्तिपूजा के घोर विरोधी थे वे मूर्तिपूजा को निरर्थक मानते थे। उनका मानना था कि पत्थर के भगवान की पूजा करने की अपेक्षा घर की चक्की की पूजा करना अच्छा है क्योंकि वह मनुष्य के काम आती है। वे कहते है कि मनुष्य पागल हो गया जो पत्थर की मूर्ति की पूजा करता है वह व्यर्थ है, बल्कि चक्की की पूजा हमें करनी चाहिए जिसके द्वारा पीसा गया अन्न खाकर मनुष्य अपनी भूख शांत करता, पेट भरता है, लेकिन चक्की की पूजा कोई नही करता है। इस संबंध में कबीर दास जी कहते है–

''दुनिया ऐसी बावरी, पाथर पूजन जाय

घर की चाकिया कोइ ना पूजै, जेहि का पीसा खाय। ।।

तुकाराम जी भगवान विट्ठल के साकार रुप की उपासना करते थे लेकिन वे परंपरागत मूर्तिपजा के विरोधी थे वे मूर्तिपूजा के बाह्याडंबरों का विरोध करते हुए कहते है–

''कायास पाषाण पूजिता पितळ । अष्ट धातुखळ भावे विणं।

तुका म्हणें भाव नाही करी सी सेवा। तेणे काय देवा योग्य होशी।। १२

बाह्याचार : कबीर ने ढोंगी मनुष्य व बाह्याडंबर करने वालों को फटकारते हुए कहते है जो साधु का वेश बनाए हुए है, हाथ में माला धारण कर ईश्वर का जाप करते है लेकिन उनके मन में नाना प्रकार की विषय वासना भरी हुई है। ऐसे लोगों के संबंध में कबीर कहते है कि भला इन बालों ने तुम्हारा क्या अहित किया जो इनको बार–बार मुंडते हो। तू अपने मन को विषय विकारों के प्रभाव से हटाकर स्वच्छ क्यों नही करता? यया –

केसो कहा बिगाडिया, जे मुंडे सौ बार।

मन को काहै ना मुंडिए, जामै विषय विकार।। १३

मुंड मुंडाने की प्रथा भारतीय समाज में बहुत प्राचीन है मुंडन करने का विरोध करते हुए तुकाराम जी कहते हे मुंडन करने से पाप नष्ट नही होते बल्कि मन को मथने से ही मन में व्याप्त बुराइयाँ समाप्त होगी मन पवित्र होगा। इस संबंध में वे कहते है –

एक वेळे पायश्चित। केले चित्त मुंडन

तीर्थाटन : कबीर ने तीर्थाटन का विरोध किया है उनका मानना है कि आपके मन मे सच्चाई नही है और हृदय में वासना भरी हुई है तो तीर्थाटन से कुछ नही होगा। ब्रह्मा शरीर के भीतर है। व्यर्थ समय गँवाते हुए उसे ढूँढने, तीर्थ यात्रा पर जाने की जरुरत नही है। उस समय की मान्यता थी कि गंगा स्नान करने से मोक्ष मिलता है तो कबीर इस बात का खंडन करते हुए कहते है नदी में रहने वाले जीव दिन में तीन–चार बार गंगा स्नान करने वाले महात्मा साधु को मोक्ष क्यों नही प्राप्त होता? वह क्यों ईश्वर को पाने के लिए विभिन्न मंदिरों में □टकते फिरते है। कबीर कहते है –

मोको कहाँ ढूँढे बंदे, मै तो तेरे पास में।

ना मैं देवल, ना मैं मस्जिद, ना काबे, कैलास में ।।

तुकाराम महाराज कहते है ईश्वर अपने स्वयं के अंदर वास करता है हम व्यर्थ में ही उसे विभिन्न तीर्थ स्थलों में ढूँढते फिरते है इस सत्य को उद्घाटित करते हुए तुकाराम जी कहते है –

देव आहे अंतर्यामी। व्यर्थ हिंडे तीर्थ गामी

अहिंसा : कबीरदास जी अहिंसा को अपना परम धर्म मानते है और हिंसा का घोर विरोध करते है। हिंसा की यह समस्या मध्यकालीन युग की नही अपितु वर्तमान समय की भी सबसे बड़ी समस्या बनी हुई है। कबीरदास जी ने हिंसा करने वालों की निंदा करते हुए उन्हें हिंसा से दूर रहने के लिए कहा क्योंकि इसका परिणाम बड़ा □यंकर होता है। इस संबंध में कबीर कहते है –

''बकरी पाती खात है ताकी काढी खात।

जे नर बकरी खात है तिन कौ कौन हवाल।।

तुकाराम महाराज ने भी हिंसा करने वालो की, पशु हिंसा की कड़ी निंदा करते हुए कहते है –

माँस खाता हाउस (हौस) करी। जोडोनि वैरी ठेवियेला।

कोण त्याची करील कीव। जीवे जीव नेणता।''

अर्थात तुकाराम जी कहते है कि जो मनुष्य पशुओं की हत्यस करके माँस भक्षण करता है वह मनुष्य दुश्मनी निर्माण करता है । ऐसे पशु हिंसा करने वाले मनुष्य पर दया कौन करेगा? जो दूसरे जीव का सम्मान नही करता, उसका संरक्षण नही करता हैं।

परोपकार की भावना : समाज में यदि परोपकार और शुद्ध आचरण का प्रसारण हो जाये तो समाज में प्रेम व समन्वय भावना निर्माण हो जायेगी। कबीर परोपकार की भावना के संबंध में कहते है कि वृक्ष बारह महीने फल देता है जिसका उपभोग करके मनुष्य सुख का अनु□व करता है तथा यात्री उसकी छाया मे शीतलता का अनु□व करता है, पक्षी उसमें घोसला बनाकर आनंद से रहता है यथा –

तरवर तास विलंविए, बारह मास फलत।

सीतल छाया गहर फल। पंषी केलि करंत।

संत तुकाराम परोपकार को सबसे बडा पुण्य कम मानते है। परोपकार करते समय पात्र–अपात्र का विचार करना व्यर्थ है। मेघ बरसते समय यह नही देखता कि जहाँ पानी गिर रहा है वह भूमि बंजर है या उपजाऊ, वह दोनो भूमि को समान रुप से सींचता करता है। इस संबंध में तुकाराम जी कहते है –

नाही विचारीत। मेघ हागणदारी सेत।

नये पाहो त्याचा अंत । ठेवी कारणाचे चित्त ।।

अपरिग्रह या धन संचय : वर्तमान समय में मनुष्य भौतिक सुख–सुविधा का उपभोग करने के लिए पैसे के पीछे भाग रहा है। उसमें अधिक धन का संग्रह करने की प्रवृत्ति निर्माण हो रही है। कबीर दास जी कहते है व्यक्ति को संयमित जीवन जीना चाहिए। जीवन जीने के लिए जितने धन की आवश्यकता है उतना ही धन संग्रह करना चाहिए। मनुष्य की धन संचय की प्रवृत्ति के संबंध में कबीर दास जी कहते है –

साई इतना दीजिए, जामै कुटुंब समाय।

मैं भी भूखा न रहूँ, साधु न भूखा जाय।। १५

संत तुकाराम धन संग्रह करने वालों की निंदा करते हुए कहते है कि मनुष्य को धन सही मार्ग से कमाना चाहिए न कि गलत मार्ग से। साथ ही उदारता से खर्च भी करना चाहिए वे कहते है –

जोडोनिया धन उत्तम वेव्हारे, उदास विचारे वेच करी।

उत्तमाचे गति तो एक पावेल, उत्तम भागील जीव खाणी।। १६

वर्तमान युग में मनुष्य की धन संचय करने की लालसा प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इस संबंध में डॉ निर्मल कुमार फडकुले लिखते है – ''बाह्य संपत्ति की अपेक्षा मानसिक व आत्मीक संपत्ति मनुष्य को प्राप्त करनी चाहिए यह उनकी विचारात्मक भूमिका वर्तमान युगीन लोगों के लिए अधिक मार्गदर्शक है। सत्ता और संपत्ति के पीछे आज के और भविष्य के लोगों को तुकाराम के विचार पल–पल पर मार्गदर्शन करने वाले है।'' १७

निंदा करने वालों के संबंध में : कबीरदास जी कहते है मनुष्य अज्ञानी है जो दूसरे की निंदा करता है। किसी की निंदा करना अच्छी बात नही है, क्योंकि पर निंदा साधना में बाधक होती है। कबीरदास जी कहते है जो मनुष्य आपकी निंदा करता है उस निंदक को अपने समीप रखना चाहिए। इस संबंध में कबीर कहते है –

निंदक नेडा राखिए, आंगणि कुटी बंधाइ।

बिन सावण पानी बिना, निरमल करै सुभाइ।। १८

अर्थात – जो आपकी निंदा करता हो उसे अपने पास ही सुविधापूर्वक रखना चाहिए क्योंकि वह बिना पानी और साबुन के आपके स्वभाव को शुद्ध कर देता है।

तुकाराम महाराज कहते है जो व्यक्ति हमारी निंदा करता है उससे घबराने की बात नही वह हमारे लिए अच्छा है। क्योंकि वह अपने निंदा कार्य से हमारे गुण अवगुण बताता है। वह हमारी कमियों को, बुराईयों को दूर करता है। निंदकों के हमारे ऊपर बहुत से उपकार होते है वह बिना साबुन के ही हमारा पाप धोते है हमारा चरित्र उज्जवल कर देते है। इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए तुकाराम जी कहते है –

असो खळ ऐसे फार। आम्हां त्याचे उपकार

करिती पातकांची धुणी। मोल न घेता साबणी। १९

स्वावलंबन पर बल : कबीरदास जी ने परजीवी लोगों की निंदाकर स्वावलंबन पर बल दिया है। मनुष्य ने दूसरे पर निर्भर न होकर अपनी बुद्धि व शक्ति से आत्मनिर्भर बनना चाहिए। स्वावलंबी व्यक्ति कभी दुःखी व दरिद्र नही होता है। इस संबंध में कबीर कहते है –

करू बहिया बल आपनी, छाड बिरानी आस।

जाके अंगना नदी बहै, सो करा मरै पियास।।

अर्थात परिश्रम करने वाला व्यक्ति अपने आँगन में नदी बहाता है ऐसी व्यक्ति कभी प्यासा नही मर सकता। अतः स्वावलंबी व्यक्ति ही समाज में अभिमान और सम्मान के साथ जी सकता है।

तुकाराम महाराज स्वावलंबी जीवन जीने के पक्ष में थे इसलिए उनका मानना था कि मनुष्य को भाग्य के भरोसे न रहकर परिश्रम करना चाहिए। श्रम करने वाला व्यक्ति स्वावलंबी होता है वह अपने जीवन में सफल हो जाता है इस संबंध में तुकाराम कहते है –

असाध्य ते साध्य करिती सायास

कारण अभ्यास तुका म्हणे

इंद्रिय संयम : कबीरदास जी कहते है कि मनुष्य को अपनी इंद्रियों को नियंत्रण में रखना चाहिए। इंद्रियों पर संयम रखने से मनुष्य का जीवन सुखी व संतुष्ट हो सकता है। सामान्य व्यक्ति का मन दसो दिशाओं में □कता है वह विषयों का भोग करके भी असंतुष्ट रहता है इससे मनुष्य के जीवन में अशांति व परेशानी उत्पन्न होती है वह चिंताग्रस्त हो जाता है इस संबंध में कबीर दास जी कहते है –

काहे रे मन दह दिसी धावै, विषिया संगि संतोष न पावै।

जहाँ–जहाँ कलपे तहाँ–तहाँ बंधना, रतन कौ थाल किया तो रंधना।।

कबीर दासजी हमें समझाते हुए कहते है कि मनुष्यों को अपनी इंद्रियों पर संयम रखना चाहिए। इंद्रियों पर संयम रखते पर मनुष्य का जीवन सफल हो जाता हैं वह ईश्वर को प्राप्त करता है।

संत तुकाराम ने ईश्वर की □क्ति साधना में आत्म संयम तथा चित्त शुद्धि पर विशेष बल दिया है – तुकाराम की दृष्टि में इंद्रिय संयम के बिना ईश्वर का नाम स्मरण बाह्याचार मात्र है। इंद्रिय पर नियंत्रण न रखने वाले व्यक्ति के लिए राम नाम उच्चारण ठीक वैसे ही है जैसे भोजन के साथ मक्खी निगल जाना। इस संबंध में तुकाराम जी कहते है –

इंद्रिया सी नेम नाही। सुखी राम म्हणोनि काइ।

जेवी मासी सवे अन्न। सुख ने दी ते भोजन।।

उपर्युक्त बिंदुओं के विवेचन के आधाार पर हम संत कबीर व संत तुकाराम के काव्य व विचारों का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए इस निष्कष पर पहुँचते है कि दोनों संतों ने प्रेम, सत्य, अहिंसा, सदाचार, परोपकार, इंद्रिय संयम, आदि जैसे जीवन मूल्यों पर अपने विचार प्रस्तुत किए है। दोनों संत कवियों ने अपनी वाणियों के माध्यम से जाति–पॉति का भेद, छूआछूत की भावना, अंधश्रद्धा, तीर्थाटन, बाह्यांबर, नारी विषयक दृष्टिकोण आदि से समाज में जो अराजकता, अव्यवस्था व दूषित वातावरण निर्माण हो गया था उसकी कटु आलोचना करके भाईचारा, प्रेम, सत्य

परोपकार, सदाचार, अहिंसा, इंद्रिय संयम आदि मानव मूल्यों को स्थापित किया है। दोनों संतों के काव्य मं साम्य अधिक वैषम्य कम दिखाई देता है।

वर्तमान समय में भ्रष्टाचार, अराजकता, चारित्रिक पतन, आतंकवाद, बलात्कार, हिंसाचार, अनीति आदि विकृतियों समाज में निर्माण हो गई है। आज का मनुष्य संतो द्वारा स्थापित जीवन मूल्यों को भूल चूका है इसलिए वर्तमान समय में समाज में फैली इन विकृतियों का समूल नाश करने के लिए, प्रेम, अहिंसा, नैतिकता, परोपकार, इंद्रिया संयम आदि जीवन मूल्यों को पुनः स्थापित कर दूषित वातावरण को शुद्ध करने की अत्यंत आवश्यकता है।

मानव मूल्यों के विघटन के इस संक्रमण काल में कबीर वाणी तथा तुकाराम गाथा का मूल्यांकन वर्तमान परिस्थिति में करना आज की आवश्यकता है। कबीर और तुकाराम रचित काव्य बहुजन हिताय है। पतनोन्मुख समाज की ऐसी अवस्था में समाज को इससे बाहर निकालने के लिए कबीर व संत तुकाराम का काव्य जीवन मूल्यों की कसौटी पर खरा उतरता है। वर्तमान काल की स्थिति में उनकी वाणी व विचारों की अत्याधिक आवश्यकता समाज व राष्ट्र को है। उनका काव्य जीवन मूल्यों से युक्त होने के कारण आज भी प्रासंगिक व महत्वपूर्ण है जितना उनके काल में था और आने वाले समय में भी रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

१. डॉ. पुष्पपाल सिंह – कबीर ग्रंथावली सटीक पृष्ठ – ४६

२. डॉ. नुले कबीर और तुकाराम के काव्य में सामाजिकता – तुलनात्मक अध्ययन पृष्ठ – २१४

३. डॉ. श्यामसुंदर दास – कबीर ग्रंथावली पृष्ठ – ८२

४. तुकारामाची अभंग गाथा – अभंग क्रमांक १३४६

५. डॉ. पुष्पपाल सिंह – कबीर ग्रंथावली सटीक – पृष्ठ १७५

६. डॉ. गोपाल राव बेणारे – सार्थ तुकारामाची अभंग गाथा – अभंग क्र. २२३६

७. डॉ. इशरत खान – कबीर विमर्श – पृष्ठ ७३

८. डॉ. गोपाल राव बेणारे – सार्थ तुकारामाची अभंग गाथा – पृष्ठ ३५३

६. डॉ. पुष्पपाल सिंह – कबीर ग्रंथावली सटीक – पृष्ठ १७०

१०. डॉ. गोपाल राव बेणारे – सार्थ तुकारामाची अभंग गाथा – पृष्ठ ३३५

११. डॉ. देवकृष्ण मौर्य – कबीर एक रहस्य भरा व्यक्तित्व – पृष्ठ –४४६

१२. डॉ. गोपाल राव बेणारे – सार्थ तुकारामाची अभंग गाथा – पृष्ठ ६७

१३. डॉ. पुष्पपाल सिंह – कबीर ग्रंथावली सटीक – पृष्ठ १६१

१४. डॉ. गोपाल राव बेणारे – सार्थ तुकारामाची अभंग गाथा – पृष्ठ ५४०

१५. डॉ. राजकिशोर – कबीर की खोज – पृष्ठ ६८

१६. डॉ. गोपाल राव बेणारे – सार्थ तुकारामाची अभंग गाथा – पृष्ठ ४४२

१७. डॉ. निर्मल कुमार फडकुले – संत तुकाराम : एक चिंतन – पृष्ठ ८१

१८. डॉ. पुष्पपाल सिंह – कबीर ग्रंथावली सटीक – पृष्ठ २७३

१६. डॉ. गोपाल राव बेणारे – सार्थ तुकारामाची अभंग गाथा – पृष्ठ – २५३